THE TIMES OF INDIA

Date:22-02-22

The Khattar Thesis

Haryana CM wrong on reasons for job quota. And reservations will not roll back factory automation

TOI Editorials

Haryana chief minister Manohar Lal Khattar in an interview to this newspaper, defended his government's decision to legislate reservation of jobs for locals in the private sector. His case rests on two pillars. It's the state's responsibility to provide job opportunities, and the advent of GST has catalysed this reservation policy. Let's deal with GST first. It moved India's indirect taxation system from an origin-based one to a consumption-based one. It did impact states with a large manufacturing base that incurred upfront costs to encourage industrialisation. However, the issue was addressed and compensation provided.

Therefore, it's incorrect on Khattar's part to use GST as a reason to provide domicile-based reservation in the private sector. As for the CM's first reason, there's a much larger trend at work that is affecting not just states in India but also every other economy. We are in the midst of the fourth industrial revolution that is accelerating automation of manufacturing processes. Consequently, there's a relative decline in the need for labour. A World Bank study said that between 1994 and 2011, the share of manufacturing in total employment declined in most countries. Even countries where the manufacturing sector expanded relative to GDP were not immune.

In India, Azim Premji University researchers found that, after adjusting for inflation, Rs 1 crore investment in 1994 could absorb 33 factory workers, but by 2015, the figure was down to just eight workers. Job reservation for locals is not going to reverse this trend. Instead, it will harm the entire country by sparking a chain reaction across states. So, what can states do? Here, Khattar needs to reorient Haryana's focus on creating opportunities for locals. Technological changes are making the quality of human capital relevant to investment. It's in this area that India needs to do much better.

The way forward for states is to invest far more in education and skilling to make the youth more employable. Technological change, across industrial revolutions, ended some kinds of jobs but not work. Chief ministers need to help the young prepare for work through skilling programmes that help them adapt.

दैनिक भास्कर

Date:22-02-22

सरकारें अपनी शक्तियों की सीमा पहचानें

संपादकीय

सुप्रीम कोर्ट के एक ताजा फैसले के दूरगामी परिणाम होंगे। कोर्ट ने यूपी सरकार को आदेश दिया है कि नागरिकता संशोधन अधिनियम के खिलाफ आंदोलन करने वालों से सरकारी संपत्ति नष्ट करने के आरोप में जो मुआवजा वसूला है, वो तत्काल वापस किया जाए। कोर्ट ने सुनवाई के दौरान आश्चर्य व्यक्त करते हुए प्रश्न किया 'क्या कोई सरकार खुद ही शिकायतकर्ता और फैसला करने वाली हो सकती है।' मुख्यमंत्री ने अपने इस कदम को जारी चुनावों में मुद्दा भी बनाया है। प्रदेश सरकार आरोपी तय करती थी, संपत्ति का मूल्य तय करती थी और फिर उसे उन्हीं आरोपियों से वसूल भी लेती थी। लेकिन लगभग कुछ महीने बाद सरकार को अपनी गलती का अहसास हुआ तो वसूली की प्रक्रिया के लिए एक नया कानून बनाकर ऐसे दावों को ट्रिब्यूनल के पास भेजने का प्रावधान किया। कोर्ट के सन 2009 और 2018 के स्पष्ट आदेशों में कहा था कि ऐसे दावों के निपटारे के लिए जज की नियुक्ति भुगतान दावा आयुक्त के रूप में की जाए। लेकिन सरकार ने इसकी अनदेखी करते हुए जिले के एडीएम के जरिए वसूली शुरू कर दी। सरकार चाहती थी कि जिनसे पूर्व में वसूली हो चुकी है उन्हें पैसे वापस करने का आदेश कोर्ट न दे क्योंकि इससे एक वर्ग में संदेश गलत जाएगा। सरकार ने कोर्ट को बताया कि वे सभी नोटिस, जो सैकड़ों अन्य लोगों को गए हैं, उन्हें निरस्त करने की प्रक्रिया शुरू हो गई है। लेकिन सुप्रीम कोर्ट ने इस पर नाराजगी व्यक्त करते हुए कहा कि सरकार स्वयं ही सारी शक्तियां नहीं हासिल कर सकती। यह संविधान में प्रदत्त शक्ति-संतुलन के मूलभूत सिद्धांत के खिलाफ है। कोर्ट के इस फैसले से अन्य राज्य भी ऐसे एकतरफा कदम उठाने से बचेंगे।

दैनिक जागरण

Date:22-02-22

यूक्रेन संकट का हल

संपादकीय

यह अच्छी बात है कि अमेरिकी राष्ट्रपति कूटनीति के जरिये यूक्रेन संकट का हल निकालने के पक्ष में हैं, लेकिन यदि वह वास्तव में ऐसा चाहते हैं तो फिर उन्हें रूस पर शर्तें थोपने के साथ ही उसकी चिंताओं का भी समाधान करना होगा। यदि रूस यूक्रेन को लेकर आक्रामक है तो इसके पीछे के कारणों को अमेरिका को उसी तरह समझना होगा, जिस तरह कई

यूरोपीय देश समझते दिख रहे और बीच-बचाव की कोशिश भी कर रहे हैं। यूक्रेन संकट के मूल में अमेरिकी नेतृत्व वाले सैन्य संगठन नाटो का उन देशों में भी विस्तार है, जो एक समय रूस के नेतृत्व वाले सोवियत संघ का हिस्सा थे। जब सोवियत संघ अस्तित्व में था और अमेरिका एवं उसके बीच शीतयुद्ध चरम पर था, तब नाटो के जवाब में वारसा संधि भी थी। कायदे से वारसा संधि खत्म हो जाने के बाद नाटो को भी अपना विस्तार रोक देना चाहिए था, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। रूस की यह चिंता जायज दिखती है कि अमेरिका नाटो के विस्तार के माध्यम से उसकी घेराबंदी कर रहा है। यूरोपीय देशों को भी इस पर ध्यान देना होगा कि जब वे अपने ऊर्जा स्नोतों के लिए रूस पर निर्भर हैं तो फिर नाटो के विस्तार में योगदान देकर मास्को की चिंता बढ़ाने में भागीदार क्यों बन रहे हैं?

रूस इसकी अनदेखी नहीं कर सकता कि अमेरिका न केवल यूक्रेन को नाटो का सदस्य बनाने को तैयार है, बल्कि उसे सैन्य सामग्री भी प्रदान कर रहा है। यह विचित्र है कि जब अमेरिका अपने हितों के साथ-साथ विश्व व्यवस्था के लिए भी चीन के आक्रामक उभार को लेकर चिंतित है, तब वह रूस को घेरने में लगा हुआ है। ऐसा करके वह न केवल यूक्रेन संकट को उलझा रहा है, बल्कि रूस को चीन के पाले में धकेलने का भी काम कर रहा है। आखिर यह कैसी कूटनीति है कि जब अमेरिका को चीन पर लगाम लगाने पर ध्यान देना चाहिए, तब वह रूस के रूप में उसे एक सहयोगी उपलब्ध करा रहा है? नि:संदेह जहां अमेरिका को अपनी कूटनीति पर नए सिरे से विचार करने की जरूरत है, वहीं रूस के लिए भी यह आवश्यक है कि वह यूक्रेन के रूसी भाषी इलाकों में अलगाववादियों को उकसाने से बाज आए। वह यूक्रेन के रूसी भाषी क्रीमिया को पहले ही बलपूर्वक अपने में मिला चुका है। यदि रूस भाषा के आधार पर यूक्रेन में अलगाववाद को हवा देगा तो इसका बुरा असर दुनिया के अन्य हिस्सों में भी पड़ेगा। यह सर्वथा उचित है कि यूक्रेन मामले में भारत किसी पाले में खड़ा होने के बजाय बातचीत के जरिये मसले का हल निकालने पर जोर दे रहा है। उसे इसी दिशा में अपनी सक्रियता और बढ़ानी चाहिए।

Date:22-02-22

रोका नहीं जा सकता श्रमिकों का पलायन

भरत झुनझुनवाला, (लेखक आर्थिक मामलों के जानकार हैं)

पंजाब के मुख्यमंत्री चरणजीत सिंह चन्नी ने 'यूपी-बिहार-दिल्ली के भइये' वाला बयान देकर राजनीतिक आरोप-प्रत्यारोप का सिलसिला कायम करने के साथ ही उत्तर प्रदेश और बिहार जैसे राज्यों से श्रमिकों के पंजाब, महाराष्ट्र, केरल आदि राज्यों में पलायन के विषय को सामने ला दिया। चन्नी के वक्तव्य का स्वयं पंजाब के लोगों ने विरोध किया, क्योंकि पंजाब ही नहीं, बल्कि संपूर्ण देश और यहां तक कि विश्व अर्थव्यवस्था के लिए भी श्रमिकों का पलायन बहुत आवश्यक है। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष यानी आइएमएफ ने बताया है कि कुशल एवं अकुशल, दोनों ही श्रमिकों का पलायन लाभप्रद होता है। कुशल क्षमता के श्रमिकों का लगभग सभी विकसित देश स्वागत करते हैं। यदि नर्स, डाक्टर और कंप्यूटर प्रोग्रामर इत्यादि क्षमताओं से आप मेजबान देश की व्यवस्था में योगदान कर सकें तो आपको आसानी से वीजा मिलता है। अमेरिका में वीजा के लिए यह लगभग एक अनिवार्य जरूरत होती है।

आइएमएफ ने यह भी कहा है कि अकुशल श्रमिकों का पलायन भी मेजबान देशों के लिए उतना ही लाभप्रद होता है। अकुशल श्रमिक मेजबान देश-प्रदेश के नागरिकों को कुशल कार्य के लिए मुक्त कर देते हैं। जैसे जब बिहार के अकुशल श्रमिक पंजाब आते हैं तो वे वहां धान की कटाई जैसे कार्य करते हैं। तब पंजाबी नागरिकों के लिए यह कार्य करना जरूरी नहीं रह जाता और वे अन्य कुशल कार्य जैसे इंटरनेट पर मंडी में धान के दाम पता लगाने, उत्तम गुणवत्ता के बीजों का अन्वेषण करने, सब्जियां उगाने से मुक्त हो जाते हैं। यदि ये अकुशल श्रमिक नहीं आते तो पंजाब के नागरिकों को स्वयं ही जोताई, बोआई फसलों की कटाई आदि का काम करना पड़ता और पंजाब में सब्जी-अनाज का उत्पादन कम हो जाता।

श्रमिकों के पलायन का दूसरा लाभ यह है कि मेजबान क्षेत्र में वेतन कम हो जाते हैं। जैसे इस समय मणिपुर में अकुशल श्रमिक की दिहाड़ी करीब 1200 रुपये है, क्योंकि वहां मैदानी इलाकों से सीमित संख्या में श्रमिक जा रहे हैं। वहीं पंजाब में दिहाड़ी उससे इसलिए कम है, क्योंकि वहां श्रम बहुल मैदानी इलाकों से अकुशल श्रमिक ज्यादा आ रहे हैं। यदि ऐसा न हो तो वहां भी दिहाड़ी की दर और ऊपर चली जाएगी। ऐसे में पंजाब के किसानों द्वारा उत्पादित गेहूं, धान और अन्य फसलें महंगी हो जाएंगी और उनकी आय में गिरावट आएगी। स्पष्ट है कि श्रमिकों का आगमन पंजाब के लिए वरदान है। वास्तव में इसीलिए चन्नी को अपने वक्तव्य से पीछे हटना पड़ा और उन्होंने यह सफाई दी कि उनका आशय बिहार के श्रमिकों के प्रति नहीं, बल्कि दिल्ली से आने वाले नेताओं के संबंध में था।

श्रमिकों के अन्यत्र कहीं जाने से वहां की स्थानीय संस्कृति कुछ प्रभावित होती है और बाहरी श्रमिकों को सेवाएं उपलब्ध कराने से संबंधित राज्य की स्वास्थ्य एवं शिक्षा व्यवस्था पर भार पड़ता है। हालांकि दूसरे राज्यों से श्रमिकों के आने से राज्य विशेष की आय में जितनी वृद्धि होती है, उसकी तुलना में स्वास्थ्य एवं शिक्षा ढांचे में अतिरिक्त खर्च बहुत ही कम होता है। इसलिए यह महत्वपूर्ण विषय नहीं है। ऐसे में यह कहना गलत नहीं होगा कि ऐसे मुद्दों को उठाने की आड़ में मंशा मुख्य रूप से राजनीतिक लाभ से जुड़ी होती है। कई बार अपराधों को भी बाहरी लोगों से जोडऩे की कुचेष्टा की जाती है। कुछ समय पहले महाराष्ट्र में ऐसे ही कुछ मामले देखने को मिले, जिन्हें राजनीतिक घुमाव देकर पलायन के मुद्दे से अनायास ही जोड़ दिया गया।

श्रमिकों की सप्लाई करने वाले राज्यों के लिए भी उनका पलायन लाभप्रद रहता है। वहां बेरोजगारी कम होती है। शेष बचे हुए श्रमिकों की दिहाड़ी बढ़ती है। पलायित श्रमिकों द्वारा भारी मात्रा में रेमिटेंस राशि भेजी जाती है, जिससे राज्य की आय बढ़ती है। केरल में बड़ी संख्या में लोग पश्चिमी एशिया के देशों में कार्य कर रहे हैं और उनके द्वारा भेजी गई रकम से केरल की अर्थव्यवस्था चल रही है। हां इतना अवश्य है कि आपूर्तिकर्ता राज्यों में कुछ समय के लिए परिवार पर दबाव पड़ता है, क्योंकि पुरुष बाहर चले जाते हैं। बच्चों को माता-पिता का दोहरा संरक्षण नहीं मिलता, लेकिन ये सब अल्पकालिक प्रभाव ही हैं, क्योंकि समय क्रम में संपूर्ण परिवार ही पलायन कर जाता है। जैसे बिहार के लोग दिल्ली में अपना मकान बनाकर बस जाते हैं। यानी जब तक संपूर्ण परिवार पलायन न करे तब तक ही परिवार पर दबाव बना रहता है।

सप्लायर राज्यों के लिए मुख्य नुकसान ब्रेन-ड्रेन यानी प्रतिभा पलायन का है। बड़ी संख्या में प्रशासनिक अधिकारी उत्तर प्रदेश और बिहार से चुने जाते हैं। ऐसे सक्षम लोग अपने राज्य के विकास में योगदान न देकर संपूर्ण देश के विकास में योगदान देते हैं, जिसका अधिक लाभ पंजाब, महाराष्ट्र और केरल आदि को होता है, न कि बिहार और उत्तर प्रदेश को। पलायन के संबंध में विषय यह भी है कि बिहार और उत्तर प्रदेश जैसे राज्य अपने कुशल नागरिकों को पलायन करने से रोकने की नीति बनाएं। विचारणीय है कि वर्तमान में बिहार के उद्यमी सूरत में फैक्ट्री लगाते हैं और बिहार के ही श्रमिक

वहां पर रोजगार करने जाते हैं। कपास और धागा खरीदने और कपड़े बेचने का पूरे देश का एक ही बाजार है, फिर क्या कारण है कि बिहार का उद्यमी अपने राज्य में फैक्ट्री नहीं लगाना चाहता? बिहार और ऐसे ही अन्य राज्यों के नेताओं को चाहिए कि अपने नागरिकों के दूसरे राज्यों में हीन भावना से देखे जाने पर आपत्ति जताने के साथ ही अपने यहां सुशासन बढ़ाने पर भी ध्यान दें। जब तक श्रमिकों की आपूर्ति करने वाले राज्य अपनी शासन व्यवस्था में सुधार नहीं करेंगे, तब तक उन राज्यों के कुशल कर्मी पलायन करते ही रहेंगे। यह स्वाभाविक है, लेकिन इससे इन राज्यों का विकास नहीं हो सकेगा।

आने वाले समय में केवल देश के भीतर ही नहीं, बल्कि वैश्विक स्तर पर भी श्रमिकों का पलायन और बढ़ेगा। अर्थशास्त्री जगदीश भगवती ने कहा है कि जिस प्रकार 20वीं शताब्दी में वस्तुओं का वैश्विक व्यापार बढ़ा, उसी प्रकार 21वीं शताब्दी में श्रमिकों का वैश्विक पलायन बढ़ेगा और यह विश्व अर्थव्यवस्था के लिए हर प्रकार से लाभप्रद होगा। इसलिए हमें पलायन को स्वीकार करना चाहिए। इसके साथ ही हर राज्य को अपने राज्य में सुशासन स्थापित करने पर ध्यान देना चाहिए।

जनसत्ता

Date:22-02-22

क्वाड की चुनौतियां

सतीश कुमार

पिछले दिनों मेलबर्न में क्वाड समूह के सदस्य देशों- अमेरिका, आस्ट्रेलिया, जापान और भारत के विदेश मंत्रियों की बैठक में अफगानिस्तान, म्यांमा सहित कई गंभीर वैश्विक मुद्दों पर चर्चा हुई। बैठक के बाद जारी साझा बयान में पाकिस्तान और चीन के बीच ताजा मुलाकात को भी अप्रतयक्ष ढंग से रखने की कोशिश हुई। लेकिन यूक्रेन के मुद्दे पर भारत चुप रहा। कई अन्य वैश्विक मुद्दों पर आम सहमति बनी। जैसे एक अनुशासित और व्यवस्थामूलक हिंद-प्रशांत क्षेत्र बनाने, कोरोना महामारी से लड़ने के लिए साझेदारी रणनीति और जलवायु संकट से निपटने के लिए योजना। लेकिन यह सवाल भी कहीं न कहीं हैरान तो कर ही रहा है कि आखिरकार यह तैयारी हो किसके खिलाफ रही है? क्या चीन विरोध की जरूरत सबके लिए एक समान है या आपस में भी मतभेद हैं? अगर हम क्वाड की धार और आधार को समझने की कोशिश कर रहे हैं, तो इसकी प्रासंगिकता पर चर्चा करना और जरूरी हो जाता है। हालांकि चीन इसे महज प्रचार तंत्र कह कर इसकी अहमियत कम करके दिखाने में लगा है।

क्वाड ने आतंकवाद पर भी कड़ा रुख दिखाया है। इस बैठक की भारत के लिए बड़ी उपलब्धि यह रही कि सभी सदस्य देशों ने मुंबई और पठानकोट जैसे आतंकी हमलों की कड़ी निंदा की। सीमा पार आतंकवाद पर पाकिस्तान को आड़े हाथों लिया। यह मसला इसलिए भी उठा क्योंकि कुछ दिनों पहले ही चीन दौरे पर गए पाकिस्तान के प्रधानमंत्री इमरान खान ने चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग के साथ बातचीत में कश्मीर का मुद्दा उठाया था। इसलिए इस बैठक के माध्यम से क्वाड ने आतंकवाद के मुद्दे पर पाकिस्तान को चेताते हुए कड़ा संदेश दे दिया। साझा बयान में साफ-साफ कहा गया कि 'हम सभी देशों से यह सुनिश्चित करने का आह्वान करते हैं कि उनके नियंत्रण वाले क्षेत्र का उपयोग आतंकवादी गतिविधियों के लिए नहीं होने दिया जाए।' इस बैठक में अफगानिस्तान के मौजूदा हालात पर भी चिंता जताई गई। चारों विदेश मंत्रियों ने सत्ता पर काबिज तालिबान को खरी-खरी सुनाई। साझा बयान में कहा गया कि 'हम यूएनएससी (संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद) के प्रस्ताव 2593 (2021) की फिर से पुष्टि करते हैं कि अफगान क्षेत्र का इस्तेमाल किसी भी देश को धमकाने या हमला करने, आतंकवादियों को पनाह देने, उन्हें प्रशिक्षित करने, या आतंकवादी कृत्यों की योजना बनाने या वित्त पोषित करने के लिए नहीं होने दिया जाना चाहिए।'

मोटे तौर पर क्वाड चार देशों का संगठन है जिसमें भारत, अमेरिका, आस्ट्रेलिया और जापान शामिल हैं। ये चारों देश विश्व की बड़ी आर्थिक शक्तियां भी हैं। ये एशिया-प्रशांत क्षेत्र में चीन की बढ़ती दादागीरी और उसके प्रभाव को काबू में करना चाहते हैं। क्वाड को लेकर एक और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि 2007 में जापान के तबके प्रधानमंत्री शिंजो आबे ने इसकी अवधारणा औपचारिक रूप से पेश की थी। हालांकि इसे 2004 में हिंद महासागर में आई सुनामी के वक्त प्रभावित देशों खासतौर से जापान की मदद के उद्देश्य से भी जोड़ा जाता रहा है। वर्ष 2012 में आबे ने हिंद महासागर से प्रशांत महासागर तक समुद्री सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए आस्ट्रेलिया, भारत और अमेरिका को साथ लेकर 'डेमोक्रेटिक सिक्योरिटी डायमंड' बनाने का इरादा जताया था। कोविड संकट के मद्देनजर हाल में अमेरिका ने क्वाड प्लस की शुरुआत की और इसमें ब्राजील, इजराइल, न्यूजीलैंड, दक्षिण कोरिया और वियतनाम को शामिल किया गया। इसी तरह ब्रिटेन भी अब भारत सहित विश्व के दस लोकतांत्रिक देशों के साथ मिल कर एक गठबंधन बनाने पर विचार कर रहा है, जिसका उद्देश्य चीन पर निर्भरता को कम करते हुए इन देशों के योगदान से एक सुरक्षित 5जी नेटवर्क खड़ा करना है।

यह स्पष्ट है कि चीन की घेरेबंदी के लिए क्वाड तेजी से काम कर रहा है। हालांकि इसके लक्ष्य और भी हैं। हिंद प्रशांत क्षेत्र में क्षेत्रीय ताकतों के प्रभाव को भी नियम के दायरे में बांध कर रखना है। उसमें जापान, चीन दोनों ही हैं। दूसरे विश्व युद्ध के पहले जापान ने इसी रास्ते को अपनी जागीर बना लिया था। आज वही काम चीन करने की कवायद कर रहा है। अमेरिका इसलिए परेशान है क्योंकि इस क्षेत्र में उसकी सीधी पहुंच नहीं बन पा रही है। इसलिए वह भारत, आस्ट्रेलिया जैसे भागीदार देशों के बूते इस क्षेत्र में अपने कदम जमाने की दिशा में बढ़ रहा है। दक्षिण चीन सागर में सबसे ज्यादा संकट जापान और अमेरिका का है। इस क्षेत्र के साथ ही पश्चिमी प्रशांत क्षेत्र में भी चीन ने पिछले दिनों अपनी गतिविधियां तेजी से बढ़ाई हैं। जापान का सेनकाकू द्वीप चीन के निशाने पर है। ताइवान को लेकर चीन जिस तरह बेताब है, उसके लिए भी उसे जापान को घेरना होगा। इस क्षेत्र में जापान और अमेरिका का सैनिक गठबंधन है। ताइवान को बचाने के लिए अमेरिका को भी जापान की मदद चाहिए। आस्ट्रेलिया भी अमेरिका का प्रमुख सहयोगी देश है और दोनों के बीच सैन्य सहयोग है। पर अभी भारत इस मुहिम में शामिल नहीं है। इसलिए यह प्रश्न अहम है कि चीन की घेरेबंदी को लेकर क्या चारों देशों की सोच एक जैसी है? पिछले दिनों आस्ट्रेलिया चीन के विरुद्ध सबसे ज्यादा मुखर था, विशेषकर कोरोना महामारी के दौरान।

भारत कभी भी क्वाड को सैन्य गठजोड़ बनाने के पक्ष में नहीं रहा और आज भी नहीं है, जबकि बाकी तीनों देश इसे नाटो की तरह सैन्य संगठन बनाने की दिशा में बढ़ते दिख रहे हैं। भारत के ना कहने के बाद ही तीन देशों का नया संगठन बना, जिसे ओकस नाम से जाना जाता है। जबकि सबसे बड़ी मुसीबत भारत के लिए चीन ही पैदा कर रहा है। हिंद महासागर में उसका जासूसी अभियान जारी है। दक्षिण एशिया के भीतर गुट बना कर वह भारत विरोधी गतिविधियों को अंजाम दे रहा है। श्री लंका का हंबनटोटा बंदरगाह, मालद्वीप, म्यांमा और बांग्लादेश भी चीन के निशाने पर हैं। फिर भी भारत हिंद प्रशांत को सैनिक मुठभेड़ का अड्डा नहीं बनने देना चाहता है।

दूसरा महत्त्वपूर्ण कारण भूगोल भी है। चारों देश धरती के अलग-अलग भूभाग पर स्थित हैं। इसलिए सबकी जरूरतें और रंजिश के कारण भी अलग-अलग हैं। ऐसे में लगता नहीं कि क्वाड एक मजबूत इकाई बन कर काम कर सकता है, विशेषकर चीन के प्रतिरोध में। जबकि चीन का व्यापारिक विस्तार चारों देशों के लिए एक मजबूरी भी है। सवाल है कि क्या क्वाड के साथ विश्व की नई व्यवस्था बन कर तैयार होगी, जो समुद्री नियमों और लोकतांत्रिक मूल्यों को स्थापित कर पाएगी? क्या विश्व की संस्थाए निष्पक्ष होकर काम करेंगी? यह नहीं भूलना चाहिए कि विश्व व्यवस्था में मजबूत देशों की कोशिश हमेशा एक पक्षीय होती है यानी कोई भी नियम नहीं होता, बल्कि उनकी गतिविधियां ही नियम बनाती हैं। उन्नीसवीं शताब्दी में ब्रिटेन ने जो किया, वही पिछले सौ सालों में अमेरिका करता रहा है और अब चीन कर रहा है।

ऐसा नहीं कि चीन पर लगाम नहीं लगाई जा सकती। क्वाड चाहे तो भारत को मजबूत बना कर यह काम कर सकता है। इसके लिए अमेरिका और अन्य देश को बुनियादी सोच बदलनी होगी। तिब्बत चीन की सबसे कमजोर नब्ज है। इसके क्षेत्रफल का पैंतीस प्रतिशत हिस्सा तिब्बत का है। यहां इसकी सीमा भारत से मिलती है। इसलिए ध्रुवीकरण तिब्बत को लेकर होना चाहिए, न कि दक्षिण चीन सागर को लेकर। लेकिन इसमें दिक्कत अमेरिका और जापान को होगी और इसके लिए शायद वे कभी राजी भी न हो। भारत के लिए अपना हित ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। दुश्मन एक, लेकिन उसकी परछाई की लंबाई चारों के लिए अलग-अलग दिखाई देती है। यही सबसे बड़ी मुसीबत है।

राष्ट्रीय सहारा

Date:22-02-22

मुद्रा में छिपी संप्रभुता

डॉ. संजय मयूख, (लेखक भाजपा के राष्ट्रीय प्रवक्ता एवं मीडिया सहप्रभारी हैं)

किसीभी राष्ट्र की संप्रभुता की परिचायक होती है उसकी अपनी मुद्रा। अगर उसकी मुद्रा में शक्ति है, तो वह शक्तिशाली देश है। मुद्रा यानी करेंसी धन का वह भौतिक रूप है, जिससे व्यक्ति अपनी दैनिक जिंदगी में खरीद-बिक्री कर सकता है। इसमें सिक्के और कागज के नोट दोनों शामिल हैं। भारत में रुपया और पैसा मुद्रा हैं। मुद्रा के प्रचलन से पहले वस्तु विनिमय होता था, यानी एक वस्तु लो, दूसरी वस्तु दो।

स्वंत्रत भारत ने अपनी पहली करेंसी के रूप में 1949 में एक रुपये का नोट जारी किया था। इस नोट पर सारनाथ स्थित सिंह शीर्ष वाला आशोक स्तंभ था, जो बाद में भारत का राष्ट्रीय चिह्न बना। अब विज्ञान और तकनीक की तरक्की से मुद्रा के भौतिक रूप का प्रयोग कम होने लगा है और इसकी जगह डिजिटल रूप से किसी वस्तु की कीमत अदा की जा रही है। डेबिट व क्रेडिट कार्ड या यूपीआई से किसी वस्तु की कीमत को अदा करना इसी का रूप है, लेकिन डिजिटल करेंसी या क्रिप्टो करेंसी इससे एकदम अलग है। अठारहवीं और उन्नीसवीं सदी में कहा जाता था कि, जो समुद्र पर राज करेगा वही पृथ्वी पर राज करेगा। २१वीं सदी में विज्ञान और तकनीक से दुनिया बदल गई है। आज कहा जा सकता है कि जो वर्चुअल दुनिया पर राज करेगा, वही पृथ्वी पर राज करेगा। वैश्विक पटल पर वर्चुअल दुनिया के बढ़ते वर्चस्व को देखते हुए भारत ने इस दिशा में ठोस और दूरगामी प्रभाव वाला कदम उठाया है। 21वीं सदी में महानायक के रूप में उभरे प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने वर्चुअल करेंसी (डिजिटल करेंसी) लाने की घोषणा करके भारतीय अर्थव्यवस्था को एक लंबी छलांग लगाने का अवसर दिया है।

वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने वर्ष 2022-23 के आम बजट में देश में डिजिटल करेंसी लाने की घोषणा की। इसके साथ ही, यह घोषणा भी की गई कि क्रिप्टो करेंसी या अन्य इसी तरह की डिजिटल करेंसी वर्चुअल दुनिया में किया गया निवेश माना जाएगा। क्रिप्टो करेंसी किसी देश की वर्चुअल करेंसी नहीं है, बल्कि यह मल्टीनेशनल कंपनी की करेंसी है। इस पर किसी भी देश की सरकार का नियंत्रण नहीं है। इस पर प्रतिबंध तो लगाया जा सकता है, लेकिन इसे रोका नहीं जा सकता है। क्योंकि, इसके लेन-देन और इस लेन-देन में सम्मिलित लोगों के बारे में कोई स्पष्ट आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। इसके अलावा, क्रिप्टो करेंसी से खरीद तो की जा सकती है, लेकिन इसे किसी भी देश की मुद्रा में बदला नहीं जा सकता है। यानी, अगर भारत में किसी के पास क्रिप्टो करेंसी है, तो उसे रुपये में बदला नहीं जा सकता है। अर्थात, यह पूरी तरह छलावा है। इसलिए, अधिसंख्य देशों ने क्रिप्टो करेंसी को मान्यता नहीं दी है। दूसरी ओर, भारत में डिजिटल करेंसी भारतीय रिजर्व बैंक जारी करेगा और यह देश में मौजूद भौतिक करेंसी का विकल्प होगा। यानी, इसे रुपये में बदला जा सकेगा। इससे ऑनलाइन पेमेंट किए जा सकेंगे। क्रिप्टो करेंसी से चावल-दाल नहीं खरीदा जा सकता है, जबकि भारत में जारी होने वाली डिजिटल करेंसी से ऐसा किया जा सकेगा।

वर्चुअल दुनिया में बढ़ रही क्रिप्टो करेंसी की ताकत ने विश्व के विकसित देशों की समस्या बढ़ा दी है। भारत भी इससे चिंतित है। इससे एक नई आर्थिक गुलामी का साया विश्व पर मंडराने लगा है। 21वीं सदी में वर्चुअल करेंसी दुनिया की आवश्यकता बन रही है, लेकिन इससे सही ढंग से नहीं निपटा गया, तो यह कई समस्याएं पैदा कर सकती है। डिजिटल करेंसी के रूप में वर्चुअल करेंसी किसी देश द्वारा कानून और नियमों के तहत लाना लाभदायक हो सकता है, जबकि क्रिप्टो करेंसी खतरनाक। हमने देखा है वैश्विक महामारी कोविड-19 के काल में डिजिटल लेन-देन को भारत सहित सभी देशों ने प्रोत्साहित किया। इससे बहुत से लोगों को संक्रमण से बचाया जा सका था। केंद्र सरकार ने कोरोना काल में लोगों से निरंतर अपील की कि भीम-यूपीआई सहित अन्य डिजिटल वॉलेट को इस्तेमालन करें और संक्रमण से बचें। कोरोना काल में क्रिप्टो करेंसी बिटक्वाइन ने भारत सहित विश्व के अधिकांश देशों में भी तेजी से अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। बिटक्वाइन वॉलेट देश में अन्य मोबाइल वॉलेट से काफी मिलते-जुलते हैं। वजीर-एक्स, यूनोक्वाइन, जेबपे जैसी भारतीय कंपनियां बिटक्वाइन के कारोबार कर रही हैं।

एक अनुमान के अनुसार देश में 10 हजार करोड़ रुपये से अधिक की राशि बिटक्वाइन में लगी हुई हैं। बिटक्वाइन के लेन-देन में युवाओं की भागीदारी सबसे अधिक है, जबकि इसे रेगुलेट करने की अभी तक कोई नियम और कानून भारत में

नहीं था। कहा यह भी जाता है कि ड्रग और अन्य अवैध कारोबार में निजी कंपनियों की क्रिप्टो करेंसी का इस्तेमाल किया जा रहा है, क्योंकि इस पर नजर रखना न तो आसान है और न ही इसे नियंत्रित करने के लिए कानून है। यह काफी गंभीर विषय है। इसलिए वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने क्रिप्टो करेंसी पर टैक्स की व्यवस्था कर इसके नियंत्रण के लिए नियम और कानून बनाने की प्रक्रिया शुरू कर दी है। भारतीय उप महाद्वीप का इतिहास स्पष्ट कर देता है कि कारोबार करने आई कंपनियों ने देश को गुलाम बनाया और अपने वर्चस्व वाले इलाके को नियंत्रित करने के लिए अपनी मुद्रा जारी की। चाहे वे अंग्रेज हों, फ्रांसिसी या पुर्तगाली। 21वीं सदी में किसी भी देश को टारगेट कर वर्चुअल कंट्रोल एरिया के रूप मे विकसित करने का काल शुरू हुआ।

देखा जाए, तो क्रिप्टो करेंसी किसी भी देश को आर्थिक रूप से गुलाम बना सकता है, क्योंकि लोग शुरू में लाभ के चक्कर में इसमें फंस जाते हैं और बाद में उनका इस पर नियंत्रण नहीं रहता है। जिस देश में ज्यादा लोग क्रिप्टो करेंसी के चक्कर में फंस जाएंगे, उस देश का तो भगवान ही मालिक है, विश्व के बदलते परिदृश्य में भारत में क्रिप्टो करेंसी को नियंत्रित करने के लिए अभी कोई भी कानून एवं नियम नहीं है। इसे देखते हुए प्रधानमंत्री मोदी की सरकार ने चालू वित्तीय वर्ष के आम बजट में बेहतरीन घोषणा की है। इस घोषणा के तहत रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया डिजिटल रुपया अर्थात वर्चुअल मुद्रा लाएगा। फिलहाल भारत में बिटक्वाइन जैसी किसी भी निजी कंपनी की क्रिप्टो करेंसी को मान्यता नहीं दी गई है। प्रधानमंत्री, मोदी द्वारा डिजिटल रुपया लाने की घोषणा से अर्थव्यवस्था मजबूत होगी और भारत आर्थिक रूप से मजबूत भविष्य की ओर लंबी छलांग लगाएगा।

Live हिन्दुस्तान .com

Date:22-02-22

क्योंकि बनाई जाती हैं औरतें

विभूति नारायण राय, (पूर्व आईपीएस अधिकारी)

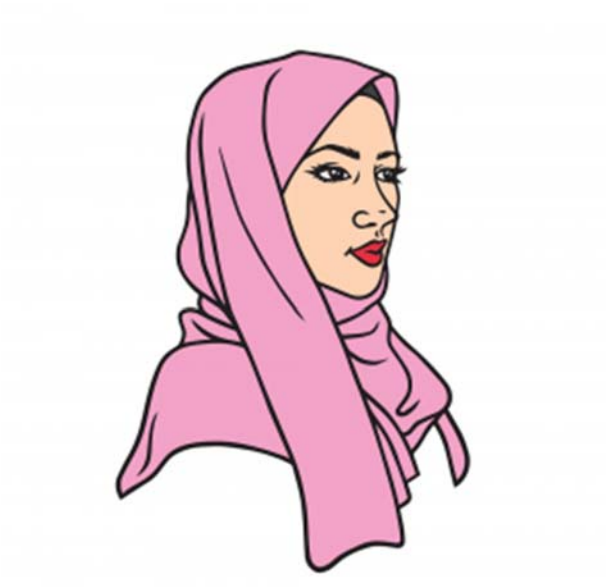

पिछले दिनों मुझे एक बड़ी दिलचस्प तस्वीर दिखाई दी। उत्तर भारत की एक जुझारू, और मुस्लिम महिलाओं के मोर्चे पर निरंतर सक्रिय सदस्या ने बुरके में अपना फोटो साझा किया। उन्होंने कहा कि कर्नाटक के हालिया विवाद में बुरका पहनने वाली महिलाओं से अपनी यकजेहती जाहिर करने के लिए वह बुरका पहने अपनी यह छवि प्रसारित कर रही हैं। मैंने उनसे निवेदन किया कि सिर्फ फोटो शूट के लिए बुरका पहनने की जगह उन्हें आइंदा शहर में निकलते समय हमेशा परदे में रहना चाहिए। स्वाभाविक ही था कि यह मनोरंजक सुझाव खारिज हो गया। मुझे याद आया कि इस बहादुर महिला ने तो अपने निकाह के मौके पर इस्लामी पितृ-सत्ता के परखचे उड़ा दिए थे। फिर ऐसा कैसे हुआ कि वह खुद को नख से शिख तक हिजाब में ढककर तस्वीर खिंचवाने की सोच भी पाईं? यह तो कुछ ऐसा हुआ, जैसे 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जबलपुर की एक स्त्री को सती होने से बचाने के क्रम में अंग्रेज मजिस्ट्रेट को सबसे बड़ा झटका तब लगा, जब खुद सती होने वाली स्त्री ने इस अमानवीय प्रथा के पक्ष में तर्क देने शुरू कर दिए। इसी तरह, बहुत से संगठनों और मानवाधिकार कार्यकर्ताओं ने, जो ईरान या अफगानिस्तान में औरतों को जबर्दस्ती परदे में रखने के खिलाफ खड़े दिखते थे, कर्नाटक विवाद में उससे उलट रुख अपनाया है।

हमें यह याद रखना होगा कि औरत का शरीर पितृ-सत्तात्मक समाज के लिए सबसे बड़ी चुनौती रहा है। इस शरीर को काबू में रखने के लिए यह समाज कई तरह के नियंत्रण लगाता है और उनमें कपड़े-लत्ते सबसे प्रभावी औजार हैं। वह क्या पहनेगी और कैसे पहनेगी, इसी से उसकी यौनिकता तय होती है। पितृ-सत्ता को धर्मों से वैधता मिलती है और इसीलिए हर धर्म स्त्री के लिए एक दोयम दरजे के मुकाम की कल्पना करता है। दुनिया के तीनों बड़े धर्मों- ईसाई, इस्लाम और हिंदू, ने अपने-अपने तरीके से औरत पर पाबंदियां लगाने की कोशिश की है। यह अलग बात है कि इनमें सबसे कम लचीला होने के कारण इस्लाम को अन्य दो के मुकाबले समय के अनुसार बदलने में सबसे अधिक दिक्कत आती रही है। यह भी सही है कि समय का बहाव किसी के रोके नहीं रुकता और परिवर्तन तो होते ही रहेंगे। सऊदी अरब का अपेक्षाकृत कट्टर समाज इसका सबसे बड़ा उदाहरण है, जहां देर से ही सही, औरतों को ड्राइविंग या बिना किसी मर्द रिश्तेदार के अकेले यात्रा करने जैसे वे सभी अधिकार मिलने लगे हैं, जो दुनिया के दूसरे हिस्सों में सहज स्वाभाविक रूप से काफी पहले स्वीकार कर लिए गए थे।

कर्नाटक में पिछले दिनों जो कुछ हुआ, उसने एक खास तरह का विमर्श पैदा किया है। बावजूद इसके कि राज्य के तंत्र पर हावी हिंदुत्ववादी शक्तियों ने किसी नेकनीयती से यह विवाद नहीं खड़ा किया, पर इससे उपजी बहस ने कुछ महत्वपूर्ण सवालों की तरफ हमारा ध्यान आकर्षित किया है। यह कहने की जरूरत नहीं है कि जो संगठन हिजाब विरोधी मुहिम चला रहे थे, वे वैलेंटाइन डे पर पार्कों में हिंदू जोड़ों की पिटाई जैसी तमाम हरकतें भी करते दिखते हैं, इसलिए किसी के मन में भ्रम नहीं होना चाहिए कि वे महिलाओं को बराबरी का दर्जा देने के समर्थक हैं। इस आंदोलन के पीछे जो राजनीति है, उसे न भुलाते हुए भी हम उस दिलचस्प बहस को नजरंदाज नहीं कर सकते, जो खुद प्रभावित समुदाय के अंदर चल रही है।

मुंबई फिल्म उद्योग में कम समय के लिए ही सही, पर अपनी प्रतिभा का लोहा मनवाने वाली जायरा वसीम और अमेरिकी सुपर मॉडल बेला हदीद ने हिजाब का समर्थन किया है। जायरा ने पिछले दिनों सफलता की ओर अग्रसर अपने फिल्मी करियर को इसलिए छोड़ दिया था कि यह उनके इस्लामी अकीदे के खिलाफ था और बेला हदीद शॉर्ट्स पहनने वाली ऐसी मॉडल हैं, जिनका मानना है कि यह अधिकार औरत के पास होना चाहिए कि वह परदा करेगी या नहीं? दोनों सोच में कुछ झोल हैं। जायरा वसीम भूल गईं कि कुरान में औरतों के साथ मर्दों पर भी पोशाक को लेकर कुछ पाबंदियां लगाई गई हैं और धर्मगुरु आमतौर से उनकी चर्चा नहीं करते। ट्विटर के जरिये वह ला महरम (ऐसे पुरुष, जिनसे वैवाहिक संबंध निषिद्ध नहीं हैं) से जो संवाद कर रही हैं, वह भी कट्टरपंथी भाष्य के अनुसार हराम है। द सेकेंड सेक्स की रचयिता और स्त्री विमर्श की सबसे बड़ी पुरोधा सिमोन द बुआ के अनुसार, औरत पैदा नहीं होती, बनाई जाती है। बेला हदीद जिन औरतों के चुनाव की आजादी की बात कर रही हैं, वे इसी बनाए जाने की प्रक्रिया से गुजरती हैं और परिवार व समुदाय का मूल्यबोध उनकी अंतरचेतना का इस हद तक अविभाज्य अंग बनता जाता है कि वे पूरी ईमानदारी से मानने लगती हैं कि परदा उन्हें दुनियावी व धार्मिक अर्थों में 'अच्छा' बनने में मदद करेगा। औरत कैसे बनाई जाती है, इसका उदाहरण हम भारतीय समाज में करोड़ों महिलाओं की सोच में तलाश सकते हैं, जो कहीं बहुत गहरे इस यकीन में मुब्तिला हैं कि वे अपने परिवार के पुरुष सदस्यों से हर मामले में हीन हैं। हिजाब का समर्थन कर रही औरतों के बारे में कोई बात करते समय हमें सिमोन द बुआ की राय याद रखनी चाहिए, तभी किसी तर्कसंगत नतीजे पर पहुंच सकेंगे।

विमर्श में रेखांकित करने वाला तथ्य यह है कि औरत क्या पहने, इसका फैसला उसी के ऊपर छोड़ दिया जाना चाहिए। यदि किसी धर्म को अधिकार नहीं है कि वह उसे परदे में रहने का आदेश दे, तो राज्य को भी आमतौर से इस फैसले से बचना चाहिए कि वह कहां-क्या पहने। धर्म और राज्य, दोनों को उन आधुनिक और लैंगिक समानता को बढ़ावा देने वाले मूल्यों का समर्थन करना होगा, जिन्हें मानवता ने हजारों साल की यात्रा के दौरान हासिल किया है। कई कारणों से धर्म के मन मे हिचकिचाहट होगी और तब उम्मीद की जा सकती है कि राज्य अपने धर्मनिरपेक्ष रवैये से इस शून्य को भर सकेगा। दुर्भाग्य से, कर्नाटक में राज्य एक खास एजेंडे पर चलता दिखा। मुस्लिम महिलाओं को यह विश्वास नहीं दिलाया जा सका कि हिजाब हटाने के पीछे कोई धार्मिक दुर्भावना नहीं है। ऐसा न होने पर पूरी संभावना है कि वे धर्म के अतिरेक विमर्श में विश्वास करने लगें।